International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 208-214

भारतवर्ष के उत्तरी भाग के पौराणिक तीर्थों की मीमांसा

कृष्णा देवी[1], डॉ० निधि रस्तोगी[2]

[1] शोधार्थी, पीएच०डी० (संस्कृत), ओ०पी०जे०एस० विश्वविद्यालय, चुरू, राजस्थान, भारत।
[2] सहायक प्रोफेसर, ओ०पी०जे०एस० विश्वविद्यालय, चुरू, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

उत्तर भारत के पौराणिक तीर्थों में पूरा उत्तरप्रदेश तो आ ही जाता है। इसके साथ–साथ जम्मू–कश्मीर, पंजाब भी सम्मिलित है। जम्मू–कश्मीर तथा पंजाब में उर्दू, पंजाबी, डोगरी तथा कश्मीरी भाषा बोली जाती है। किन्तु हिन्दी समझने में किसी को भी इन भागों में कठिनाई नहीं होती। कश्मीर, गङ्गोत्तरी, यमुनोत्तरी, केदारनाथ तथा बदरीनाथ की यात्रा जाड़ों में संभव नहीं होती। कश्मीर की यात्रा मार्च से अगस्त मास तक उचित होती है। यह पवित्र देव भूमि भी अनेकों बार आक्रमणकारियों के द्वारा आखेट हुई है। बार–बार मन्दिरों एवं तीर्थों को आततायियों की क्रूर वृति ने ध्वस्त किया है। अनेक तीर्थ स्थान लुप्त हो गये तथा अनेक मन्दिर मसज़िदों में परिवर्तित कर दिये गये। आक्रमणकारियों के धर्मोन्माद ने जो क्रूर अत्याचार किये, उनमें ऋषि–आश्रमों की परम्परा उच्छिन्न हो गयी किन्तु यह काल की कृपा है कि इस देव भूमि पर आज भी पवित्र तीर्थ विद्यमान हैं। इस भू–भाग में प्राप्त मुख्य पौराणिक तीर्थ हैं–अमरनाथ, केदारनाथ, गङ्गोत्तरी, यमुनोत्तरी, बद्रीनाथ, हरिद्वार आदि।

अमरनाथ धाम

श्री अमरनाथ का परम–पावन क्षेत्र जम्मू–कश्मीर राज्य के अनन्तनाग जिले में अवस्थित है। कश्मीर का तिल–तिल पवित्र है। इसे तीर्थों का घर माना जाता है। कश्मीर में स्थित असंख्य तीर्थों में से एक श्रीअमरनाथ धाम हिन्दू धर्म में सबसे प्रसिद्ध तीर्थ है। यह तीर्थ भगवान शिव को समर्पित है।[1] श्री अमरनाथ तीर्थ समुद्रस्तर से 16000 फुट की ऊँचाई पर पर्वत में लगभग 60 फुट लम्बी, 25 से फुट चौड़ी, 15 फुट ऊँची प्राकृतिक गुफा के स्वरूप में विद्यमान है।[2] यह पवित्र गुफा 5000 साल से भी अधिक प्राचीन मानी जाती है।

अमरनाथ गुफा में भगवान शिव के हिम–ज्योतिर्लिङ्ग के दर्शन होते हैं[3], वहीं हिम शक्तिपीठ भी बनता है जिसे पार्वती पीठ भी कहते हैं। यह पार्वती पीठ शक्तिपीठ कहलाता है। यह पार्वती पीठ 51 शक्तिपीठों में से एक है। इसी पार्वतीपीठ के साथ गणेशपीठ भी स्थित है। श्रावण–पूर्णिमा को श्री अमरनाथ के दर्शन के साथ–साथ यह शक्तिपीठ भी दिखाई देता है। इस स्थान पर देवी सती के देह के 'कण्ठ' का पतन हुआ था। अतः यहाँ देवी सती के कण्ठप्रदेश की पूजा की जाती है। यहाँ की शक्ति महामाया तथा भैरव त्रिसन्ध्येश्वर हैं।[4]

अमरनाथ गुफा हिन्दू पौराणिक कथाओं का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं।[5] एक प्राचीन दंतकथा के अनुसार भगवान शिव अपनी दिव्य एकता पार्वती के साथ गुफा में विराजमान थे। गुफा में भगवान शिव ने पार्वती माता को जीवन के अस्तित्व का रहस्य बताया और अमरकथा सुनाई। वे इस बात से अपरिचित थे कि यह अमर कथा कबूतरों का एक जोड़ा भी सुन रहा है तथा वे कबूतर भी कथा सुनकर अमर हो गये। वर्तमान समय में भी जब तीर्थ यात्री बाबा अमरनाथ के दर्शनों को जाते हैं तो वहाँ पर उन कबूतरों के दर्शन भी होते हैं।

गुफा के इतिहास के विषय में एक अन्य कथा भी प्रचलित है कि एक मुसलमान चरवाहा (गडेरिया) जिसका नाम बूटा मलिक था, उसे एक साधु ने कोयले का थैला दिया और कहाँ कि इस थैले को घर जाकर खोलना, घर पहुँच कर जब उस चरवाहा न थैले को खोला तो वहाँ पर कोयले के स्थान पर सोना था। वह चरवाहा प्रसन्नता के कारण उछल पड़ा और साधु का धन्यवाद करने दौड़ा चला आया। परन्तु उसे साधु के स्थान पर एक गुफा मिली जहाँ उसे भगवान शिव के हिमलिङ्ग के साथ–साथ पार्वती पीठ तथा गणेश पीठ के दर्शन हुए।[6] तभी से श्रद्धालुजन इस महापावन गुफा के दर्शन हेतु आने लगे। आज भी यात्रियों द्वारा चढ़ाये गये चढ़ावे का एक निश्चित भाग मलिक परिवार को जाता है जबकि शेष भाग श्रीअमरनाथ श्राइन बोर्ड को चला जाता है।

श्री अमरनाथ की यात्रा जून–अगस्त के महीनों में की जाती है और इसका समापन रक्षा–बन्धन के दिन होता है। अमरनाथ गुफा एक सीढीनुमा घाटी में स्थित है तथा यह तीर्थयात्रा दो मार्गों के द्वारा की जाती है। अमरनाथ की यात्रा का पहला मार्ग चन्दनबाडी से 30 कि०मी० की दूरी पर है जबकि दूसरा मार्ग श्रीनगर से लेह–लद्दाख मार्ग के निकट स्थित सोनमर्ग से होता हुआ बालताल की ओर जाता है। वहाँ से गुफा की लम्बाई 14 कि०मी० की दूरी पर है।

अमरनाथ गुफा के नीचे ही अमरगङ्गा का प्रवाह है जहाँ तीर्थयात्री स्नान करके भगवान शिव, माता पार्वती तथा गणेश जी के हिम द्वारा निर्मित लिंग के दर्शन करते हैं। इस लिंग की एक विशेषता यह है कि यह लिंग मई–जून के महीने में प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होता है और अगस्त महीने में धीरे–धीरे पिघलने लगता है। भगवान शिव के दर्शनों से मनुष्य को परमपद की प्राप्त होती है तथा जो इस परम–पावन स्थान पर अपने प्राण छोड़ता है वह शिवात्मा को प्राप्त करता है।[7] नीलमत पुराण में अनुसार इस तीर्थ के दर्शन तथा उसके पवित्र जल में स्नान करके सौ गायों के दान का फल प्राप्त होता है।[8] इस तीर्थ के विषय में अधिक क्या कहा जाये, यह स्थान मुक्ति का स्रोत है जो भी व्यक्ति इस स्थल पर आकर भगवान शिव से कुछ भी माँगता है। श्री अमरेश्वर उसकी सभी कामनाओं को पूर्ण करते हैं।

वासुकी तीर्थ

वासुकी तीर्थ जम्मू–कश्मीर राज्य के भद्रवाह क्षेत्र में अवस्थित है। यह तीर्थ स्थान वासुकी नाग को समर्पित है। वासुकी नाग भद्रवाह का इष्ट देव माना जाता है। वासुकी नाग मन्दिर भव्य एवं विशाल है। यह मन्दिर सभी नाग मन्दिरों से प्राचीन एवं सुन्दर है। वासुकी नाग मन्दिर का विवरण वासुकी पुराण मे मिलता है।[9] वासुकी मन्दिर का प्रवेश द्वार कला का श्रेष्ठ नमूना है। मन्दिर के सिंहासन पर आदमकद वासुकी नाग और विद्याधर जिमूतबाहन की दिव्य मूर्तियाँ विराजमान हैं। मूर्ति में नाग देवता के सिर पर मुकुट है।

उसके पाँच श्रृंग बने हैं जिनके ऊपर नौ साप के फण हैं। मूर्ति के एक हाथ में शंख तथा दूसरे हाथ में चक्राकार शस्त्र है। गले में गहने और मूर्ति के नीचे दोनों तरफ द्वारपाल हैं। जीमूतवाहन के सिर पर भी मुकुट है[10] जो अलग शैली का है, मन्दिर के अन्दर देखने पर दो नाग मूर्तियाँ और भी हैं जिनमें एक का रंग काला और एक का सफेद है। वासुकी नाग मन्दिर की स्थापना भद्रवाह के राजा नागपाल ने 15वीं–16वीं शती में की थी। इस मन्दिर के साथ कई आस्था विश्वास जुड़े हैं। कहा जाता है कि वासुकी नाग गरुड से डर कर इस पहाड़ी क्षेत्र में आये और भद्रकाली माँ ने उन्हें शरण देकर इस क्षेत्र का शासक नियुक्त किया।[11] भद्रवाह में नागों का कई सदियों से आधिपत्य रहा है। वासुकी पुराण में भद्रवाह को नाग संस्कृति का केन्द्र माना गया है। हर वर्ष सितम्बर मास में भद्रवाह के वासुकी नाग को प्रसन्न करने के लिये तीन दिन का विशाल मेला भी लगता है। इस मेले में जम्मू–कश्मीर के अतिरिक्त देश के अन्य हिस्सों से भी दर्शनार्थी आते हैं। वासुकी मन्दिर के पास से एक पवित्र गुप्त गंगा भी बहती है। कहा जाता है कि यह गंगा हरिद्वार की गंगा नदी में मिलती है। वासुकी मन्दिर के अतिरिक्त कालेश्वर महादेव[12], कैलाश कुण्ड[13], मचेल माता, सरथल देवी आदि इस क्षेत्र के प्रसिद्ध तीर्थ हैं। भद्रवाह के वासुकी नाग मन्दिर की अपनी विशेष महत्ता है। कहा जाता है कि जन्म के बन्धन का नाशक स्वयं भगवान वहाँ सुरपूजित रूप में विख्यात है। इस स्थान पर मनुष्य स्नान करके विधान से वासुकी की भद्रादेवी के साथ पूजा करे और पितरों का पिण्डदान दें तथा वासुकी के चरणों में अपने आप को समर्पित करे14 ऐसा करने से मनुष्य चन्द्र ताराओं के रहते अक्षय सुख प्राप्त करता है एवं उसके पितृ दूसरी बार पिण्डदान की इच्छा नहीं करते। भाद्रपद की अमावस्या को वहाँ स्नान करके मनुष्य अक्षय सुख और फल प्राप्त करता है।

मार्तण्ड तीर्थ

मार्तण्ड[15] तीर्थ कश्मीर के सर्वोत्कृष्ट तीर्थों में गिना जाता है। यह तीर्थस्थान अनन्तनाग से पाँच किलोमीटर दूर गाँव मार्तन या मटन में स्थित है। इसका विख्यात नाम बवन (भवन) है। प्राचीन ग्रन्थों में इस जगह का नाम मार्तण्ड (सूर्य) रूप में दिया गया है। यह मन्दिर भगवान सूर्य को समर्पित है। कश्मीर के सबसे भव्य और प्रभावकारी प्राचीन अवशेष मार्तण्ड में है।[16] सूर्य भगवान की उपासना के लिये बना मार्तण्ड मन्दिर सातवीं–आठवीं शताब्दी में महान सम्राट लालितादित्य द्वारा बनवाया गया था। [17] यह एक सुन्दर बसंत और एक छोटे से वहनाला के पास चक्का के रूप में जाना जाता है। चक्का के तट पर भक्त हजारों की संख्या में विजय सप्तमी के अधिकमास महीने में अपने मृत पूर्वजों के लिये श्राद्ध करते हैं।[18]

शारिका तीर्थ

कश्मीर की घाटी देव भूमि यानी देवताओं के निवास के रूप में जानी जाती है। यह हिमालय की गोद में स्थित है। इसी हिमालय की गोद में कश्मीर के अनेक परम पावन तीर्थ विद्यमान हैं। जिनमें से कपटेश्वर[19], कोटितीर्थ, खानावारान, क्षीरभवानी, चीरमोचन, क्रमसार, कनकवाहिनी, इन्द्रकील पर्वत[20], शारिका तीर्थ बहुत ही पवित्र एवं प्राचीन माने जाते हैं। शारिका देवी का तीर्थ श्रीनगर के हरि पर्वत पर अवस्थित है। हरि पर्वत को प्रद्युम्न पीठ भी कहा जाता है। शारिका देवी कश्मीर की इष्ट देवी है। इस तीर्थ को देवी पीठ भी कहा जाता है। इस तीर्थ में देवी शारिका को जगदम्बा, त्रिपुरीसुन्दरी और राजेश्वरी के रूप में भी पूजा जाता है। कहा जाता है कि पूरा कश्मीर क्षेत्र शारिका देवी के कमल के पावों में बसा हुआ है तथा इसी स्थान पर देवी माँ ने जलोद्भव नामक राक्षस का वध किया था अर्थात् सतीसर के गहरे पानी में माँ ने उसके अस्तित्व को नष्ट कर दिया था और यही सतीसर अब कश्मीर के रूप में पहचाना जाता है।[21] शारिका देवी तीर्थ में देवी माँ की मूर्ति एक काले पत्थर की मूर्ति के रूप में विद्यमान है। माँ की मूर्ति अत्यन्त सुन्दर है। माँ दुर्गा के 18 सशस्त्र होने के कारण किसी भी रूप, नाम से परे है, इसकी अनन्त शक्ति है। शारिका देवी को स्वयंभु महामाया श्रीचक्र और महाश्रीयन्त्र के रूप में भी पूजा जाता है। श्रीचक्र में माँ चित्र के रूप में प्रस्तुत है।[22] इसका आकार देवी रूप में में है। यह श्रीचक्र राजा प्रवरसेन के द्वारा स्थापित माना जाता है। हरि पर्वत की पश्चिमी पट्टी पर देवी शारिका का आंगन है।[23] जहाँ कश्मीरी पण्डित हजारों की संख्या में एकत्रित होकर फाल्गुन कृष्ण पक्ष की होरा अष्टमी और आषाढ़ मास सप्तमी, अष्टमी और नवमी के दिनों में शारिका देवी की विशेष पूजा अर्चना करते हैं। शारिका जयंती के अवसर पर भक्तों के द्वारा चावल, हल्दी, नमक और बकरी के तेल के साथ पका हुआ मिश्रित भोग सर्वशक्तिमान देवी माँ को अर्पण किया जाता है।[24] यहाँ देवी माँ की एक हजार पवित्र नामों की स्तुति की जाती है। इस देवी पीठ पर तीन करोड़ देवी–देवताओं का वास है। इस स्थान को त्रिकोटि देवता की वास भूमि भी कहा जाता है। इस पवित्र तीर्थ स्थान पर भक्तजनों की प्रत्येक इच्छा पूरी होती है।

त्रिसन्धया देवी तीर्थ

त्रिसन्ध्या देवी तीर्थ जम्मू–कश्मीर राज्य के पौराणिक एवं पवित्र तीर्थों में से एक है। यह पवित्र स्थान जम्मू संभाग के किश्तवाड़ क्षेत्र के दच्छन इलाके में अवस्थित है। यह पवित्र स्थान जम्मू–कश्मीर सीमा के बीच में स्थित है। इस तीर्थ स्थल में त्रिसन्ध्या देवी को त्रिसन्ध्यम् तथा संध्या कहा जाता है। यहाँ सन्ध्या देवी का पवित्र झरना है। यह पवित्र झरना दिन में एक या दो बार बहता है, तथा यह झरना नीचे से ऊपर की ओर सूखता है। इस झरने के विषय में ऐतिहासिक मान्यता भी है, कहा जाता है, कि प्राचीन काल में इस झरने से दूध बहता था। संध्या देवी का यह पवित्र झरना भमेश्वर, कृष्ण, कुंडमला, कावेरी और गोदावरी नदी के समान माना जाता है।[25] यह तीर्थ पितृ तर्पण के लिए भी अति उत्तम एवं पवित्र माना जाता है।[26] सन्ध्या देवी के इस झरने के दर्शन तथा इसके जल में स्नान करने से पापों से मुक्ति मिलती है।[27] सन्ध्या[28] देवी के झरने के कुछ ही दूरी पर हुद्ध माता का स्थान है, हुद्ध माता को देवी दुर्गा माना जाता है। हुद्ध माता अपने क्षेत्र की इष्टदेवी व कुलदेवी कही जाती है। हुद्ध माता के इस पवित्र स्थल में देवी सती के शरीर का मध्य भाग गिरा था। तब से इस स्थान को पवित्र तथा पूजा जाने लगा। प्रत्येक वर्ष जून–जुलाई महीने में यहाँ एक छड़ी यात्रा भी आयोजित की जाती है। माता के दिव्य दर्शनों के लिये तीर्थ यात्री यहाँ आते हैं तथा उनकी कृपा के पात्र बनते हैं।

वैष्णवी देवी तीर्थ

जिस प्रकार भगवान विष्णु ने धर्म की स्थापना तथा अधर्मियों के नाश और नियन्त्रण के लिए समय–समय पर विभिन्न नाम, रूपों मे अवतार धारण किए, उसी प्रकार उनकी शक्ति ने भी अवतार लेकर किए, उसी प्रकार उनकी शक्ति ने भी अवतार लेकर अधर्म और अत्याचार करने वाले दानवों का नाश तथा सज्जन लोगों का परित्राण किया।[29] यह शक्ति कभी शक्तिमान के साथ अवतरित होती है। जैसे सीताराम राधाकृष्ण तथा कहीं वह स्वतन्त्र स्थिति में रहती है। जैसे माता वैष्णवी देवी स्वतन्त्र स्थिति में भी शक्ति सब प्रकार की समृद्धि और लोकसिद्धि देने वाली है। शास्त्रों में भगवान विष्णु की शक्ति को वैष्णवी कहा गया है।[30] माता वैष्णवी देवी का पवित्र तीर्थ स्थल जम्मू से 52 मील की दूरी पर उत्तर पश्चिम में शतश्रृंग नामक पर्वत पर अवस्थित है।[31] कटरा नगर इस पर्वत के चरणों में बसा हुआ है। इस पर्वत की सौ से अधिक छोटी–बड़ी चोटियां हैं।

जिसके कारण इसे शतश्रृंग नाम दिया गया था। इस पर्वत के मध्य के तीन श्रृंग या कूट दूसरों से कुछ ऊँचे हैं। अतः स्थानीय लोग इसके इस भाग को त्रिकूट कहते हैं।[32] त्रिकूट पर्वत पर स्थित वैष्णवी देवी का तीर्थ स्थान कटरा शहर से 6000 फुट की ऊँचाई पर है। माता वैष्णवी देवी के तीर्थ तक पहुँचने के लिये कटरा से 14 किलोमीटर की यात्रा करनी पड़ती है। यह यात्रा पगड़डी, पालकी, घोड़े–खच्चर तथा हैलीकाप्टर के द्वारा की जा सकती है। वैष्णवी देवी की पवित्र गुफा चरण गंगा के उद्गम स्थान पर स्थित है। माता वैष्णवी देवी ने इस गुफा के बाहर महिषासुर का वध किया था।[33] उस समय देवता ने, मनुष्यों ने, पातालवासियों ने और असुरों ने माँ का जय–जयकार किया। इसके बाद इस स्थान पर देवताओं ने प्रकट होकर माता वैष्णवी की स्तुति की थी[34] और भविष्य में सहायता करने का माता से आश्वासन लिया था।[35] माता ने यहाँ अपने तीन रूपों की तीन पिण्डियाँ स्थापित कर दीं, इसका प्रमुख कारण यह था कि अपने प्रादुर्भाव काल में ब्रह्मा, विष्णु, महेश के प्रतीक शुक्ल, रक्त और कृष्ण इन तीनों से देवी सुशोभित थी। उस समय ब्रह्मा ने देवी से कहा था – ''हे देवी! तुम्हारा नाम त्रिकाला होगा। तुम संसार की सदा रक्षा करोगी। गुणों के अनुसार तुम्हारे अन्य रूप एवं नाम होंगे। तुममें जो तीन वर्ण दिखाई पड़ते हैं, इनसे तुम अपनी मूर्तियाँ बना लो।[36] इस पर देवी ने अपने श्वेत, रक्त और श्याम रंग से युक्त तीन पिण्डरूप बा लिए। ब्रह्मा के अंश से हासरस्वती, विष्णु के अंश से महालक्ष्मी तथा शिव के अंश से महाकाली कहलाई।[37] गुफा में तीनों पिण्डियाँ उपरोक्त तीन देवियों के रूपों की प्रतीक हैं, और तीन स्वरूपों का समवेत नाम है माता वैष्णवी अर्थात् जो महालक्ष्मी, महाकाली एवं महासरस्वती हैं।[38]

जम्मू कश्मीर प्रान्त के कटरा से 14 कि०मी० पैदल चढ़ाई प्रारम्भ होती है। जिसे साधारण अथवा स्वस्थ व्यक्ति 4 घण्टे में चढ़ जाते हैं जो यात्री पैदल जाने में असमर्थ हों उनके लिये कटरा में ही घोड़ा–खच्चर, पालकी, हवाई जहाज की सुविधा उपलब्ध है। ''वैष्णवी देवी जाने वाले प्रत्येक यात्री को कटरा से यात्रा पर्ची प्राप्त करना अनिवार्य है। यह यात्रा पर्ची निशुक्ल प्रदान की जाती है।[39] कटरा से भवन तक पहुँचने के लिये बाण गंगा, चरणपादुका, अर्द्धकुमारी, हत्थी मत्था तथा सांझी छत, आदि स्थान आते हैं। उसके उपरान्त माँ वैष्णवी का भवन आता है।

माता का भवन (दरबार) अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक दिखाई देता है। दरबार में पहुँच कर यात्री स्नान करके माता के दर्शनों के लिए गुफा में प्रवेश करते हैं। प्राकृतिक गुफा का द्वार बहुत ही संकरा है। फिर भी मोटे से मोटा व्यक्ति गुफा में आसानी से प्रवेश कर लेता है। यह माता के यश का ही प्रतीक है, माता के दर्शनों के लिए तीन अन्य गुफाएँ (मार्ग) भी बनायी गयी हैं। जिससे यात्रियों को माँ के दर्शन शीघ्र हो जाते हैं।[40] मूल पराशक्ति होने के कारण पिण्डियां मूल रूप से एक ही है जो छः फुट लम्बी है। ऊपर आकर पिण्डी के सात्विक, राजसिक, तामसिक रूप से तीन अलग–अलग रूप हो गये हैं। इसी कारण माता महाकाली की पिण्डी का रंग काला है। माता महालक्ष्मी की पिण्डी का रंग लाल है और माता सरस्वती की पिण्डी का रंग सफेद है। बीच की पिण्डी अन्य दोनों से बड़ी दिखाई देती है। ये तीनों पिण्डियां राजपत्रों से मंडित हैं। सबके सिरों पर सोने के मुकुट व छत्र लगे हैं। देवी के तीनों रूपों की प्रतीक इन पिण्डियों के पीछे इन्हीं देवियों की मूर्तियां स्थापित हैं। माता वैष्णवी के सामने भगवान शिव की सर्प से सुशोभित छोटे आकार की पिण्डी है तथा दायीं ओर की दीवार में गणेश जी की प्राकृतिक पिण्डी है।[41] गुफा के बाहर भैरव नाथ का धड़ है। कहा जाता है कि माता ने चण्डी का रूप धारण कर भैरव का सिर काट दिया। उसका धड़ गुफा के पास गिरा तथा सिर घाटी में जा गिरा था। वहाँ पर भैरव का मन्दिर बनाया गया। सिर धड़ से अलग हो जाने पर भैरव का सिर माता की स्तुति करते हुये कहने लगे कि माँ मुझे क्षमा कर दो। भैरव के मुख से बार–बार माता शब्द सुनकर माँ ने उसे क्षमा कर दिया और उसे वरदान दिया कि मेरी पूजा के बाद तेरी भी पूजा होगी। मेरे भक्त मेरे दर्शन करने के बाद तेरे दर्शन भी करेंगे तभी उनकी यात्रा सफल होगी। वैष्णवी देवी की गुफा के नीचे थोड़ी दूर पर भगवान शिव की प्राकृतिक गुफा है। जहाँ भगवान शिव का शिवलिंग स्थापित है। माता वैष्णवी देवी एक परम प्रसिद्ध शक्तिपीठ माना जाता है। यहाँ प्रतिवर्ष दिन–रात माँ के दर्शनों के लिए यात्री लाखों की संख्या में आते हैं। नवरात्रों के दिनों में माँ के भवन को अति उत्कृष्ट फूलों से सजाया जाता है। जिससे भवन (दरबार) अधिक आकर्षक लगता है। यात्रियों की संख्या अधिक होने के कारण नवरात्रों के दिनों में माँ की आरती में बैठने के लिये यात्रियों को विशष अनुमति पर्ची कटवाकर लेनी पड़ती है। यहाँ यात्रियों के लिये खान–पान तथा रहने की उचित व्यवस्था उपलब्ध है। भक्तगण माँ वैष्णवी देवी के दर्शन करके अपने पापों से मुक्ति पाते हैं और माता के आशीर्वाद से अपने को धन्य करते हैं। तीर्थयात्री माँ का स्मरणकरते हुये जो अत्यन्त सौम्य और अत्यन्त रौद्र है। उसका अति बारम्बार नमस्कार करते हैं।[42] जगत की प्रतिष्ठा रूप देवी को नमस्कार है। सम्पूर्ण प्राणियों में जो विष्णुमाया नाम से कही जाती है उस बुद्धिरूपा, सिद्धिरूपा, प्रकाशरूप, चन्द्ररूप, कल्याणी को नमस्कार है।

ज्वालामुखी शक्तिपीठ

ज्वालामुखी शक्तिपीठ हिमाचल प्रदेश के जिला कांगड़ा में अवस्थित है।[43] इक्यावन शक्तिपीठों में इस देवी पीठ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह धूमा देवी का स्थान है। इस शक्तिपीठ पर भगवती सती की महाजिह्वा[44] का पतन हुआ था। यहाँ की शक्ति 'सिद्धिदा'[45] और भैरव उन्मत्त हैं। इस तीर्थ में देवी के दर्शन ज्योति के रूप में किए जाते हैं, जो पर्वत की चट्टान में नौ विभिन्न स्थानों पर बिना किसी ईधन के स्वतः प्रज्जवलित होती है। अतः इस देवी को 'ज्वालाजी' के नाम से अभिहित किया जाता है। मन्दिर के भीतर पृथ्वी से मशाल जैसी ज्योति निकलती है। शिवपुराण तथा दुर्गासप्तशती के अनुसार इसी को देवी का ज्वालारूप माना गया है।[46] इसी ज्वालारूप के कारण यह तीर्थ ज्वालामुखी के रूप में सुप्रसिद्ध हुआ। ज्वालाजी मन्दिर में निर्माण के सम्बन्ध में एक दन्त कथा प्रचलित है। जिसके अनुसार सतयुग में सम्राट भूमिचन्द्र ने ऐसा अनुमान किया कि भगवती सती की जिह्वा[47] भगवान विष्णु के चक्र से कटकर हिमाचल के पर्वत पर गिरी है। लेकिन वह काफी प्रयत्न करने पर भी उस स्थान को ढूंढने में असफल रहाँ तदोपरान्त उन्होंने नगरकोट–कांगड़ा में एक छोटा सा मन्दिर भगवती सती के नाम से बनवाया। इसके कुछ समय बाद किसी ग्वाले ने सम्राट भूमिचन्द्र को सूचना दी कि उसने अमुक पर्वत पर ज्वाला निकलती हुई देखी है, जो ज्योति के समान निरन्तर जलती रहती है। महाराज जी ने स्वयं आकर उस स्थान के दर्शन किये और घोर वन में मन्दिर का निर्माण किया।[48] श्री ज्वालाजी मन्दिर में देवी के दर्शन नौ ज्योतियों के रूप में होते हैं।[49] ये ज्योतियाँ कभी कम या अधिक भी रहती हैं। ये ज्योतियाँ प्राचीन काल से जल रही हैं। ज्योतियों को दूध पिलाया जाता है तो उसमें बत्ती तैरने लगती है और कुछ देर तक नाचती है। यह दृश्य ह्रदय को बरबस आकृष्ट कर लेता है। इन दिव्य ज्योतियों के सम्बन्ध में एक प्राचीन कथा है कि शक्ति की इन ज्योतियों के प्रति ईर्ष्यालु होकर बादशाह अकबर ने अपने शासन के समय इनको बुझाने की कोशिश की लेकिन उसकी कोशिशें व्यर्थ गयीं। इसके पश्चात् उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि वे इन ज्योतियों को बुझा दें।[50] उन्होंने इन ज्योतियों पर लोहे के मोटे–मोटे तवे रख दिये, किन्तु दिव्य ज्योतियां तवे को फाड़कर ऊपर निकल आयीं। इस घटना को जब बादशाह अकबर से सुना तो उसके मन में माता के दर्शन करने की

इच्छा जागी। तब बादशाह अकबर सबा मन सोने का छत्र अपने कंधे पर उठाकर नंगे पांव दिल्ली से ज्वालामुखी पहुँचा। वहाँ जलती हुई ज्योतियों के सामने सिर झुकाकर बादशाह ने सोने का छत्र जैसे ही चढ़ाना चाहा तोवह छत्र सोने का नहीं रहा, वह किसी अनजान धातु में बदल गया। इस चमत्कार से चमत्कृत अकबर ने माता से अपने गुनाहों के लिये क्षमायाचना की।[51] इस पवित्र तीर्थ स्थान में एक छोटे से कुण्ड में पानी लगातार खोलता रहता है जो देखने में तो गर्म प्रतीत होता है किन्तु छूकर देखें तो ठण्डा लगता है। देवी मन्दिर के पीछे एक छोटे मन्दिर में कुआँ है। उसकी दीवार से दो प्रकाशपुञ्ज निकलते हैं। इस ज्वालामुखी शक्तिपीठ के दर्शनों के लिये तीर्थयात्री दूर–दूर से आते हैं। नवरात्रों के दिनों में यहाँ तीर्थयात्रियों की संख्या अधिक होती है तथा यहाँ मेलादि का आयोजन भी होता है। यात्रियों के यहाँ भोजन–आवाज आदि के लिये निःशुल्क प्रबन्ध उपलब्ध है जिससे यात्रियों के लिए कोई भी समस्या उत्पन्न नहीं होती तथा वह ज्वालामुखी देवी दर्शन अधिक उत्साह एवं श्रद्धा–भक्ति से करते हैं।

यमुनोत्री धाम

यमुनोत्री धाम यमुना नदी के उद्गम स्थल को कहते हैं। इसके विषय में कूर्मपुराण में कहा गया है कि –

तपवस्य सुता देवी त्रिषु लोकेषु विश्रुता।
समागता महाभाग यमुना तत्र निम्नगा।।
येनैव निःसृता गङ्गा तेनैव यमुना गता।
योजनानां सहस्रेषु कीर्तनात् पापनाशिनी।।[52]

अर्थात् भगवान सूर्य की पुत्री यमुना तीनों लोकों में विख्यात है। ये भी प्रायः हिमालय के उसी स्थान से उद्भूत हुई हैं, जहाँ से गङ्गाजी निकली हैं। हजारों योजनों से भी यमुना का स्मरण–कीर्तन पापनाशक है।

यमुनोत्री हिन्दुओं के प्रसिद्ध तीर्थो में से एक है। यह तीर्थ उत्तराखण्ड राज्य के चार धामों में से दूसरा धाम माना जाता है। इस तीर्थ का मुख्य आकर्षण यमुनोत्री मन्दिर है, जोकि यमुना देवी को समर्पित है। यमुनोत्री पवित्र यमुना नदी का उद्गम स्थल है।[53] तथा बंदर–पुछ पर्वत पर समुद्र तल से 3293 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है।

यमुनोत्री में कई गरम पानी के कुण्ड हैं[54] जिन्हें बहुत पवित्र माना जाता है। इन कुण्डों का जल खोलता रहता है यात्री 'प्रसाद' को तैयार करने के लिये मलमल के कपड़े में चावल और आलू बांध कर इन गर्म कुण्डों में डुबो देते हैं। कुछ ही क्षणों में वह पदार्थ पक जाते हैं। इन कुण्डों में स्नान करना संभव नहीं। यमुना जल इतना शीतल है कि उसमें स्नान करना भी अशक्य है इसलिये गरम तथा शीतल जल मिलाकर स्नान करने के कुण्ड बने हैं। यमुना के जल में स्नान और पान से मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है एवं अपने कुल की सात पीढ़ियों को पावन करता है।[55] यमुनोत्री मन्दिर के दर्शन करने से पहले तीर्थयात्री मन्दिर के समीप स्थित 'दिव्य शिला' के दर्शन व पूजन करते हैं। यह शिला बहुत ही पवित्र मानी जाती है। गंगोत्री के समान ही यमुनोत्री मन्दिर के कपाट भी शीतकाल में बंद कर दिये जाते हैं। शीतकाल में यह पूरा क्षेत्र हिमच्छादित होता है। यमुनोत्री की यात्रा भी मई–जून और सितम्बर–नवम्बर के समय तक होती है। इन दिनों में इस तीर्थ (धाम) की यात्रा करने के लिये भक्तजन हजारों की संख्या में आते हैं तथा यमुना देवी के दर्शन करके कृतार्थ होते हैं।

केदारनाथ ज्योतिर्लिंग

भगवान शिव से सम्बन्धित यह परम पवित्र तीर्थ यात्रा माना जाता है। काशी में मरे हुए मनुष्य को तारकब्रह्म मुक्ति देने वाला होता है पर केदार क्षेत्र में तो शिवलिङ्ग के पूजनमात्र से मोक्ष होता है। भगवान शङ्कर के केदारसंज्ञक महालिङ्ग का दर्शन करके मनुष्य पुनर्जन्म का भागी नहीं होता।[56]

केदारनाथ[57] तीर्थ उत्तराखण्ड राज्य के रुद्रप्रयाग जिले के केदार क्षेत्र में अवस्थित है। उत्तराखण्ड में हिमालय श्रृंखला के केदार पर्वत पर मंदाकिनी नदी के स्रोत में स्थित केदारनाथ तीर्थ भगवान शिव के बारह ज्योतिर्लिङ्गों में पाँचवा ज्योतिर्लिङ्ग है।[58] यह उत्तराखण्ड के चार धामों में से तीसरा धाम है। केदारनाथ तीर्थ समुद्र तल से 3584 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। केदारनाथ मन्दिर बद्रीनाथ के मार्ग में स्थित है जो लोक केदारनाथ के दर्शन किये बिना ही बद्रीनाथ के दर्शन करते हैं उनकी यात्रा निष्फल जाती है।

पौराणिक इतिहास

केदारनाथ ज्योतिर्लिङ्ग की कथा के सम्बन्ध में पुराणों में विवरण उपलब्ध होता है कि नर और नारायण नाम के दो भाइयों ने भगवान की पार्थिव मूर्ति बनाकर उनकी पूजा एवं ध्यान में लीन रहते थे। भगवान शिव उनकी पूजा से प्रसन्न होकर उन्हें वरदान माँगने को कहाँ तब उन दोनों भाइयों ने भगवान शिव से इस क्षेत्र में जनकल्याण हेतु सदा विराजमान होने का वरदान मांगा। तब से ही भगवान शिव इस स्थान में केदारनाथ ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में अवतरित हुये।[59]

केदारनाथ क्षेत्र प्राचीनकाल से ही सुप्रसिद्ध है। इस पावन क्षेत्र में सत्ययुग में उपमन्यु जी ने भगवान शिव की आराधना की थी तथा द्वापर युग में महाभारत युद्ध के पश्चात् पाण्डवों को इस बात का प्रायश्चित हो रहा था। पाण्डव इस पाप से मुक्ति पाने के लिये इस केदार क्षेत्र में भगवान शिव के दर्शन हेतु आये किन्तु भगवान शिव पाण्डवों से अप्रसन्न थे अतः उन्होंने महिष (भैंसे) का रूप धारण कर लिया और वे अन्य पशुओं में जा मिले। पाण्डवों को इस बात का संदेह हो गया था तथा भीम ने अपना विशाल रूप धारण कर दो पहाड़ों पर पैर फैला दिया। अन्य सब गाय–बैल तो निकल गए पर शंकर रूपी बैल पैर के नीचे से जाने को तैयार नहीं हुए। भीम बलपूर्वक इस बैल पर झपटे लेकिन बैल भूमि में अंतर्ध्यान होने लगा। तब भीम ने बैल की त्रिकोणात्मक पीठ का भाग पकड़ लिया। भगवान शिव पाण्डवों की भक्ति, दृढ़ संकल्प देखकर प्रसन्न हो गए, उन्होंने तत्काल दर्शन देकर पाण्डवों को पाप मुक्त कर दिया उसी समय से भगवान शिव बैल की पीठ की आकृति–पिण्ड के रूप में श्री केदारनाथ में पूजे जाते हैं। यही महिषरूपधारी भगवान शिव के विभिन्न अङ्ग पाँच स्थानों में प्रतिष्ठित हुए :– इससे पञ्चकेदार माने जाते हैं।[60] श्री केदारनाथ, मध्यमेश्वर[61], श्रीतुङ्गनाथ, श्री रुद्रनाथ, श्री कल्पेश्वर– ये पाँच केदार हैं।

इन पाँचों केदारों के अतिरिक्त महिषरूपधारी भगवान शिव का सिर नेपाल देश के पशुपतिनाथ मन्दिर में माना जाता है। यह पूरा केदार क्षेत्र अनादि है। इसी केदारनाथ में भगवान शिव का नित्य सान्निध्य माना जाता है। केदारनाथ के दर्शन के लिए रूद्रप्रयाग से पैदल यात्रा करनी पड़ती है। घोड़े, पालकी आदि की सुविधा भी प्राप्त हो जाती है। यात्रा मार्ग में यात्रियों के सुविधार्थ के लिये बीच–बीच में चट्टियाँ भी बनी हुई हैं।

रुद्रप्रयाग से केदारनाथ तक जाते हुये मार्ग में छतौली, गौरीकुण्ड, अगस्त्यमुनि मन्दिर, गुप्तकाशी, नारायणकोटि, सोमप्रयाग, त्रियुगीनारायण आदि स्थान आते हैं। इसके पश्चात केदार क्षेत्र आता है। यहाँ भगवान शिव का केदारनाथ मन्दिर है। मन्दिर में भगवान शिव लिङ्ग के रूप में अवस्थित है। भक्तगण इस ज्योतिर्लिङ्ग पर पुष्पादि चढ़ाते हैं तथा पञ्चमुखी केदार जी की प्रतिमा को घी लगाते हैं तथा उनसे बौह भरकर मिलते हैं मूर्ति चार हाथ लंबी और डेढ़ हाथ मोटी है। मन्दिर में पञ्चपाण्डवों की भी मूर्तियाँ हैं। मन्दिर के बाहर नन्दी की प्रतिमा है।

दो वर्ष पूर्व केदारनाथ क्षेत्र में कई धर्मशालाएँ भी थी किन्तु 2013 में आयी आपदा (बाढ़) के कारण यह सब कुछ नष्ट–भ्रष्ट हो गया। मन्दिर तथा नन्दी कीप्रतिमा को छोड़कर केदार घाटी में कुछ भी नहीं बचा। यह तो भगवान शिव की महिमा ही है कि मन्दिर को एक तिनके के समान भी खरोंच नहीं आयी। वर्तमान समय में उत्तराखण्ड सरकार के द्वारा पूरे केदार तथा अन्य क्षेत्रों में तीर्थयात्रियों की सुविधाओं के लिये धर्मशालाएँ आदि सभी व्यवस्थाओं का उचित प्रबन्ध किया जा रहा है। केदारनाथ मन्दिर का निर्माण 10–12वीं शताब्दी में माना जाता है। मन्दिर का निर्माण पाण्डव वंश के जनमेजय ने करवाया था किन्तु इसका जीर्णोद्धार आदि शंकराचार्य ने करवाया था और यहीं उन्होंने देहत्याग किया था। केदारनाथ की तीनों दिशायें बर्फ से ढकी रहती हैं और शीतकाल में तो यहाँ रहना असम्भव सा ही है इसी कारण कार्तिक पूर्णिमा के होते–होते पुजारीलोग केदार जी पञ्चमुखी मूर्ति लेकर नीचे 'ऊखी मठ' में आ जाते हैं तथा छः मास तक केदार जी वहीं पूजा होती है। छः मास के बाद मेश संक्रांति के दिन केदारेश्वर मन्दिर के कपाट फिर खुले जाते हैं। इन छः मासों में केदारेश्वर के दर्शन के लिए तीर्थयात्री देश–विदेश से यहाँ आते हैं। तीर्थ यात्रियों की संख्या के साथ–साथ उनका उत्साह भी अधिक होता है। भक्तजन केदारेश्वर के दर्शन करके जन्म–मरण से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं।

बद्रीनाथ धाम

इस धाम के विषय में स्कन्दपुराण में वर्णन मिलता है कि–

नारायण प्रभर्विष्णुः शाश्वतः पुरुषोत्तमः
तस्यातियशसः पुण्यां विशालां बदरीमनु।।
आश्रमः ख्यायते पुण्यस्रिषु लोकेषु विश्रुतः।
यत्र नारायणो देवः परमात्मा सनातनः।
तत्र कृत्स्नं जगत् सर्व तीर्थान्यायतनानि च।।
तत् पुण्यं परमं ब्रह्म तत् तीर्थ तत् तपोवनम्।
तत् पर परमं देव भूतानां परमेश्वरम्।।
शाश्वतं परमं चैव धातारं परमं पदम्।
यं विदित्वा न शोचन्ति विद्वांसः शास्रहृष्टयः।।[62]

अर्थात् अन्य तीर्थों में स्वधर्म का विधिपूर्वक पालन करते हुये मृत्यु होने से मुक्ति मिलती है परन्तु बदरीक्षेत्र के तो दर्शनमात्र से ही मुक्ति मनुष्य के हाथ में आ जाती है। जहाँ साक्षात् सनातन देव परमात्मा नारायण विराजमान हैं, वहाँ सारे तीर्थ सम्पूर्ण आयतन तथा जगत् को ही प्रस्तुत मानना चाहिये। बदरी ही परमतीर्थ, तपोवन तथा साक्षात् परात्पर ब्रह्म है। यहाँ जीवों के स्वामी परमेश्वर हैं, जिन्हें जानकर शोक, मोह, चिन्ता तुरन्त मिट जाती है। अधिक क्या, मनुष्य कहीं से भी बदरी आश्रम का स्मरण करता रहे तो वह पुनरावृत्तिवर्जित श्री वैष्णवधाम को प्राप्त होता है।63 अर्थात् वह पुनर्जन्म से मुक्त हो जाता है। बद्रीनाथधाम उत्तराखण्ड के चार धामों में चौथा धाम है। वहीं भारत के सुप्रसिद्ध चार धामों में भी सम्मिलित है। द्वारिका, जगन्नाथपुरी, रामेश्वर तथा बद्रीनाथ ये चार धाम हैं। बद्रीनाथ धाम भगवान विष्णु को समर्पित है।64 भगवान विष्णु का यह स्थान हिन्दुओं का प्रसिद्ध तीर्थ है। यह तीर्थ उत्तराखण्ड राज्य के चमोली जिले में स्थित है। इस तीर्थ को बद्रीनाथ धाम, विष्णुधाम, बदरिकाश्रम तथा विशालपुरी के नाम से भी अभिहित किया जाता है।65 भगवान विष्णु का यह धाम हिमालय के सबसे प्राचीनतम तीर्थों में से एक है। कहा जाता है कि इस धाम की स्थापना सतयुग में हुई थी।

बद्रीनाथ धाम जाने के लिये तीन ओर से मार्ग है। रानीखेत से कोट द्वार होकर पौढ़ी (गढ़वाल) से और हरिद्वार होकर देवप्रयाग से। ये तीनों मार्ग रुद्रप्रयाग में मिल जाते हैं। रुद्रप्रयाग में मन्दाकिनी और अलकनन्दा का संगम है।[66] जहाँ दो नदियां मिलती हैं उस जगह को प्रयाग कहते हैं। बदरी–केदार की राह में कई प्रयाग आते हैं।

बदरीनाथधाम अलकनन्दा के दाहिने किनारे पर बसा हुआ है।[67] अलकनन्दा के दोनों ओर नर–नारायण पर्वत है। नारायण पर्वत के चरणों में बदरीनाथ का मन्दिर है। बदरीनाथ धाम की ऊँचाई 10480 हजार फुट है। मन्दिर में भगवान विष्णु की शालग्राम शिला में बनी ध्यानमग्न चतुर्भुज मूर्ति है। कहा जाता है कि पहली बार यह मूर्ति देवताओं ने अलकनन्दा के नारदकुण्ड में से निकालकल स्थापित की। देवर्षि नारद उसके प्रधान अर्चक हुए। कुछ समय पश्चात् बौद्ध धर्म के लोग बदरीनाथ मूर्ति को बुद्ध मूर्ति के रूप में पूजते रहे। जब शङ्कराचार्य ने बौद्धों को पराजित किया तब बौद्ध अनुयायी बदरीनाथ की मूर्ति को अलकनन्दा में फैंक गए। तब शङ्कराचार्य ने अपने योगल से मूर्ति को अलकनन्दा से निकालकर मन्दिर में प्रतिष्ठित की और मन्दिर का पुनर्निमाण करवाया। इसके पश्चात् मूर्ति को पुनः पुजारी के द्वारा तप्तकुण्ड में फेंका गया क्योंकि वहाँ तीर्थ यात्री कम आते थे, तथा फिर मूर्ति को पुनः श्रीरामानुचार्य ने तप्तकुण्ड से निकालकर मन्दिर में प्रतिष्ठित किया।[68] मन्दिर में भगवान विष्णु की मूर्ति में मस्तक पर हीरा लगा है। मूर्ति को सोने से जड़े मुकुट से सजाया गया है।

हरिद्वार (मायापुरी)

हरिद्वार के विषय में पदमपुराण में वर्णन मिलता है कि–

स्वर्गद्वारेण तत् लुल्यं गङ्गाद्वारं न संशयः।
तत्राभिषेकं कुर्वीत कोटितीर्थे समाहितः।।
लभते पुण्डरीकं च कुलं चैव समुद्धरेत्।
तत्रैकरात्रिवासेन गोसहस्रफलं लभेत्।।[69]

अर्थात् ''हरिद्वार स्वर्ग के द्वार के समान है इसमें संशय नहीं है। यहाँ जो एकाग्र होकर कोटितीर्थ में स्नान करता है। उसे पुण्डरीक यज्ञ का फल मिलता है। वह अपने कुल का उद्धार कर देता है। वहाँ एक रात निवास करने से सहस्र गोदान का फल मिलता है।'' हरिद्वार तीर्थ को मायापुरी या गङ्गाद्वार भी कहा जाता है।[70] यह तीर्थ स्थान उत्तराखण्ड राज्य का एक शहर है तथा यह पवित्र गङ्गा नदी के किनारे बसा है। हरिद्वार स्थान सात पवित्र पुरियों (नगरियों) में भी परिगणित होता है।[71] हरिद्वार के कई नाम है– हरद्वार, गङ्गाद्वार, कुशावर्त। मायापुरी हरिद्वार, कनखल, ज्वालापुर और भीमगौड़ा इन पाँचों पुरियों को मिलाकर हरिद्वार कहा जाता है।[72] हरिद्वार दो शब्दों के सहयोग से मिलकर बना है। हरि अर्थात् विष्णु और द्वार निवास या द्वार अर्थात् हरि का निवास स्थान जहाँ पर विष्णु निवास करते हैं। पवित्र गङ्गा नदी के किनारे अवस्थित हरिद्वार क्षेत्र अत्यन्त पवित्र माना जाता है। हरिद्वार में प्रति बारहवें वर्ष जब सूर्य और चन्द्र मेष में और बृहस्पति कुम्भराशि में स्थित होते हैं। तब यहाँ कुम्भ का मेला लगता है। उसके छठे वर्ष अर्धकुम्भी होती है। कहा जाता है कि सतयुग में जब देवताओं और असुरों ने समुद्र मंथन किया तो उस मंथन से जो अमृत निकला उस अमृत की एक बूँद हरिद्वार क्षेत्र में भी पड़ी। तभी से इस स्थान में कुम्भ मेले का पवित्र पर्व आरम्भ हो गया। कुम्भ मेले में तथा मकर संक्रान्ति आदि पवित्र दिनों में भक्तगण इस तीर्थ स्थान में गङ्गा नदी में डुबकी लगाकर अपने पापों का शमन कर लेते हैं। इन दिनों में इस स्थान में तीर्थ यात्रियों लाखों की संख्या में

एकत्रित होकर गङ्गा नदी में स्नान करते हैं। हरिद्वार में पितरों का तर्पण तथा श्राद्ध भी किया जाता है। लोग गङ्गा नदी में अपने पितरों की अस्थि विसर्जन तथा श्राद्ध करते हैं जिससे उनके पितरों को आत्मिक शान्ति की प्राप्ति होती है।[73]

हरिद्वार के तीर्थ

संपूर्ण हरिद्वार क्षेत्र तो परम पवित्र माना जाता ही है किन्तु गङ्गाद्वार (हरि की पौड़ी) कुशावर्त, बिल्वकेश्वर, नीलपर्वत तथा कनखल–ये पाँच प्रधान तीर्थ हरिद्वार के सुप्रसिद्ध एवं परम पावन हैं। इनमें स्नान तथा दर्शन करने से पुनर्जन्म नहीं होता।[74] इसके अतिरिक्त भीमगोड़ा, कपिलस्थान, गौरीशकर, सप्तधारा98, वीरभद्रेश्वर आदि कई छोटे तीर्थ भी हैं।

हरि की पौड़ी (गङ्गाद्वार तीर्थ)

राजा भगीरथ ने मर्त्यलोक में गङ्गाजी को लाने पर राजा श्वेत ने इसी स्थान पर ब्रह्माजी की आराधना की थी उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने वर माँगने को कहाँ राजा ने कहा कि यह स्थान आपके नाम से प्रसिद्ध हो और यहाँ पर आप भगवान विष्णु तथा महेश के साथ निवास करें और यहाँ सभी तीर्थों का वास हो। ब्रह्माजी ने कहा ऐसा ही होगा। आज से यह कुण्ड मेरे नाम से प्रख्यात होगा और इसमें स्नान करने वाले परमपद के अधिकारी होंगे।

कनखल तीर्थ

कनखल तीर्थ हरिद्वार का सबसे सुप्रसिद्ध एवं पवित्र तीर्थ माना जाता है। कनखल तीर्थ में स्नान का बड़ा माहात्म्य माना जाता है, जैसे कि पद्मपुराण के विवरण से स्पष्ट है–

कनखले स्नात्वा त्रिरात्रोपाषितो नरः।
अश्वमेधमावाप्नोति स्वर्गलोकं च गच्छति।।[75]

अर्थात् जो मनुष्य कनखल में स्नान करके तीन रात उपवास करता है। वह अश्वमेघ यज्ञ का फल पाता है और स्वर्गगामी होता है। कनखल में पवित्र नीलधारा तथा नहरवाली पवित्र गङ्गा की धारा दोनों आकर मिल जाती है। कहा जाता है कि सभी तीर्थों में भटकने के बाद यहाँ पर स्नान करने से एक खल की मुक्ति हो गयी थी, इसलिये मुनियों ने इस स्थान का नाम 'कनखल' रख दिया।76 वर्तमान समय में इसी नीलधारा तथा नहरवाली गङ्गा के संगम में लोक अस्थि विसर्जन करते हैं। यहाँ अस्थि विसर्जन एवं श्राद्ध करने से मृतकों को मुक्ति प्राप्त होती है।[77]

कनखल के अन्य विशेष आकर्षण दक्षेश्वर महादेव मन्दिर एवं सतीकुंड78 (यज्ञकुण्ड) है। कनखल आश्रमों तथा विश्व प्रसिद्ध गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के लिये भी जाना जाता है।

ऋषिकेश तीर्थ

ऋषिकेश[79] भारत के सबसे प्राचीनतम एवं पवित्रतम तीर्थ स्थलों में से एक है। प्राकृतिक सौंदर्य से घिरे हुये इस धार्मिक स्थल में बहती गङ्गा नदी ऋषिकेश के सौन्दर्य को चार–चाँद लगा देती है। ऋषिकेश हरिद्वार से 24 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। ऋषिकेश को हृषीकेश80 तथा कुब्जाम्रक81 नाम से भी अभिहित किया जाता है। ऋषिकेश को गङ्गोत्री, यमुनोत्री, बद्रीनाथ तथा केदारनाथ का प्रवेश द्वार माना जाता है। ऋषिकेश ऋषि मुनियों की तपस्थली मानी जाती है। कहा जाता है कि इस स्थान पर ध्यान लगाने से मोक्ष प्राप्त होता है। ऋषिकेश भारत का सबसे बड़ा योग केन्द्र माना जाता है। हर साल यहाँ के आश्रमों में बड़ी संख्या में तीर्थयात्री ध्यान लगाने आते हैं। ऋषिकेश में राम झूला है। रामझूले के समीप ही स्वर्गाश्रम है, स्वर्गाश्रम में तथा इसके किनारे पर भी साधु–सन्यासियों के आश्रम हैं। यह अत्यन्त पवित्र भूमि हैं। यहाँ स्नान–दान, उपवास का बड़ा महत्त्व है।82

पुराणों में ऋषिकेश के ऐतिहासिकता का भी वितरण मिलता है कि समुद्र मंथन के द्वारा निकला विष भगवान शिव ने इसी स्थान में पिया था जिससे उनका गला नीला पड़ गया था और वे नीलकंठ के नाम से प्रसिद्ध हुये। स्वर्गाश्रम की पहाड़ी पर नीलकण्ठ महादेव का मन्दिर है। एक अन्य कथा के अनुसार भगवान राम ने वनवास के समय यहाँ के जंगलों में अपना समय व्यतीत किया था। रामझूला तथा लक्ष्मण झूला इसका स्पष्ट प्रमाण माना जाता है।

संदर्भ

1. देव देव महादेव सर्वज्ञ परमेश्वर।
   कृपा कुरु महादेव विस्तरेण श्रृणोम्यहम्।। भृ० सं० 1/2
2. तीर्थङ्क पृ० 45
3. धर्मशास्त्र का इतिहास, पृ. 1403
4. काश्मीरे कण्ठदेशञ्प त्रिसन्ध्येश्वरभैरवः।
   महामाया भगवती गुणातीता वरप्रदा।। तन्त्र॰ पीठ॰, श्लोक॰ 7
5. लिंग पु॰ 1/92/139
6. राज० 7/185, 8/506, 8/596
7. प्रभा से पुष्करेऽवन्त्यां तथा चैवामरेश्वरे।
   वणीशेलाकुले चैवमृतो याति शिवात्मताम्।। लिंग. पु. 1/77/40
8. अरमेशे नरः स्नात्वा गोशतस्य फलं लभेत्।
   मालिन्या तु नरः स्नात्वा दशगोदफलं लभेत्।। नीलमत पु. 1372
9. वासुकी पुराण
10. डुग्गर संस्कृति, पृ० 198
11. वैनतेय भयात्तत्र प्राक्कदाचिन्महामति।
    वासुकिस्तत्र संगम्य भद्रायाः शरणगतः।। वासुकी पु., श्लो. 139
12. वासुकी पु., श्लो. 321–322
13. वासुकी पु॰, श्लो॰ 125
14. तत्र तीर्थ महादेवि विश्रुतं सुरपूजितम्।
    तत्र स्नात्वा विधानेन वासुकि पूजयेन्नरः।।
    भद्रादेव्या समायुक्तं पितृणां पिण्डमुद्धरेत।
    वासुकि पादयोरग्रे स्वात्मीयान्तर्पयेत् पितृन।। वासुकि पु० 452–453
15. नीलमत पु० 1073
16. तीर्थङ्क, पृ० 44
17. राज० 1/299, 3/462
18. भृ० सं० 12/3/16
19. संशयो में महान् ब्रह्मन् कपटेश्वर कीर्तनात्।
    किमर्थ भगवान शम्भु प्रोच्यते कपटेश्वरः।। नीलमत पु. 1170
20. रामपत्नी तथा पूज्या सीता देवी प्रयत्नतः। नीलमत पु० 521
21. त्रैलोक्यं वृतवान्सद्यस्ततस्तामेव चाश्रय।
    आश्रिता सा महादेवी सर्वान्कामान्प्रदास्यति।। भृ० सं० 1/1/19
22. नीलमत पु० 1380
23. कल्कि पु० 6ध्1
24. ततस्तु सर्वदेशेषु जनः शुश्राव पार्थिव।
    सती देवी नदी भूत्वा कश्मीराया विनिर्गता।। नीलमत पु॰ 262
25. भृ० सं० 10/6/97
26. राज० 3/349
27. भृ० सं० 10/2/29
28. भीमेश्वरं कृष्णवेणा कावेरी कुङ्मला नदी।
    नदी गोदावरी नाम त्रिसन्ध्यां तीर्थ मुत्तलम्।। म॰पु॰ 22/46

29. धर्मशास्त्र का इतिहास, पृ. 3/16/1440
30. राज० 1/33
31. नीलमत पु० 1471
32. दुर्गा सप्तशती 11/55
33. ब्रह्मवैवर्त पु०, प्रकृति० 66/18
34. ती० क०, पृ० 250
35. वाम पु० 84/4, पद्म पु० 6/129/16, नृसिंह पु० 65/21, भाग० 8/2/1
36. वराह पु० 95/43–48
37. सर्वगे सर्व देवेशि विश्वरूपिणी वैष्णवी। वराह पु॰ 95/52
38. इत्थं यथायदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदा वतीर्याहं करिष्याग्यारि संक्षरम्।। दुर्गा सप्तशती 11/55
39. त्रिवर्णा च कुमारी ता कृष्णा शुक्ला च पीतिका। वराह पु॰ 90/21
40. एवमुक्तातदा दैवे रकरोत त्रिविधान् तनुम्।
सितां रक्ता तथा कृष्णां त्रिमूर्तित्वं जगाम सा।। वराह पु. 90/26
41. महालक्ष्मी महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती। वैकृतिक रहस्य, श्लो॰ 25
42. जम्मू कश्मीर यात्रा गाईड, पृ. 8 द्रष्टव्य
43. आप बुलावे माता वैष्णो देवी, पृ. 28 द्रष्टव्य
44. यात्रा कथा (द्रष्टव्य हेतु), पृ. 28
45. या देवी सर्वभूतेषुविष्णुमायेतिषायित।
नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमोनमः।। मा० पु० अ० 82, 12
46. देवी भागवत पु० 7/38/6
47. ज्वालामुख्यां तथा जिह्वा देव उन्मत भैरवः। तन्त्र॰ पीठ, श्लो॰ 8
48. अम्बिका सिद्धिदा नाम्नी। भाव॰ पीठ॰ पटल–1, श्लो॰ 8
49. ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्व संधिषु।। दु॰ स॰ देव्याकवच, श्लो॰ 35
50. ज्वालामुखी तथा जिह्वा। तन्त्रघ4 पीठ॰ श्लो॰ 8
51. नौ देवियों की अमर कहानी
52. सर्वत्र सुलभा गंगा त्रिषुस्थानेषु दुर्लभा।
गंगाद्वारे प्रयागे च गंगासागर संगमे।। म० पु० 106/54,
कूर्म पु० 1/35/33, गरूड (पूर्वाध) 81/1–2
53. अग्नि पु० अ० 109, पृ० 235
54. विष्णु पु॰ 2/8–10
55. विष्णु पु॰ 2/8–10
56. योजनानां सहस्रेषु गङ्गायाः स्मरणान्नरः;
अपि दुष्कृत कर्मा तु लभते परमां गतिम्।।
कीर्त्तितान्मुच्यते पापाद्दृष्ट्वा भद्राणि पश्यति।
अवगाह्य च पीत्वा तु पुनात्यासप्तमं कुलम्।। म० पु० 104/14–15
57. गङ्गोदभेदं समासाद्य त्रिरात्रीपोषितो नरः।
वाजपेयमवाप्नोति ब्रह्मभूतो भवेत सदा।। पद्म पु० आदि स्वर्ग० 32/29
58. कूर्म० पु० ब्राह्मी संहिता, पू० 39/1–2
59. पद्म पु० 6, अ० 195–197
60. ब्रह्माण्ड पु० 3/31/71
61. तत्र स्नात्वा च पीत्वा च यमुना यत्र निस्सृता।
सर्वपापविनिर्मुक्तः पुनात्यासप्तमं कुलम्।। कूर्म० पु० ब्राह्मसंहिता पू० 39/3
62. स्कन्द पु॰ वैष्णवखण्ड, वदरिकाश्रम मा॰ अ॰ 2/20
63. महालयं तथा गुह्य कृमिचण्डेश्वरं शुभम्।
गुह्यातिगुह्यं केदारं महाभैरवमेव च।। म० 181/29
64. शिव पु॰ 4/183/21–24
65. स्कन्द पु० केदार 7/30–35
66. उ० प्र० गजे० जिल्द 36, पृ० 173
67. कूर्म पु० 1/32/25
68. क) स्कन्द पु० वैष्णव, बदरिकाश्रम मा॰ अ॰ 2/11, 12, 20
ख) महा० वन० तीर्थ० 90/18–20
69. आदि० 170/22
70. तीर्थङ्क, पृ० 59
71. क) विष्णु पु॰ 5/37/34
ख) ब्रह्माण्ड पु० 3/25–67
ग) वन० 90/25–32
72. क) स्कन्द पु० 4/33/116
ख) नारदीय पु० 2/29/38–60
73. मत्स्य पु० 22/73
74. वराह पु० 141/4–6
75. क) अनु० 15/13
ख) पद्म पु० 5/5/3
ग) मत्स्य पु० 22/10
घ) वार्ह० सू० 3/129
76. नारदीय पु० 2/40/79
77. क) अनु० 25/13
ख) भाग० 3/20/4
78. घण्टेश्वरं बिल्वकं च नीलपर्वतमेव च। म० पु० 22/70
79. पद्म पु० आदि० 28/30
80. महाभारत वन० 84/30
81. वायु पु० 83/21
82. वायु पु० 111/7